३
सभा-सत्र

प्रारंभिक सभा सत्र में सामुहिक विचार विमर्श किया गया । इस विचार गोष्ठी का शीर्षक था, "विस्तीर्ण क्षितिज: हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र में समस्त स्थानीय शासन और प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन को चुनौतियाँ" । इस सत्र का उद्देश्य था हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र में स्थानीय शासन और प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन से संबंधित मुद्दों पर विचार विमर्श करना ।

इस सत्र के अध्यक्ष थे डा. श्री मोहनमान सैंजू, कार्यकारी अध्यक्ष, एकीकृत विकास अध्ययन, काठमाण्डू । सहभागियों का चयन राष्ट्र के आधार पर (जिसका वे प्रतिनिधित्व कर रहे थे, और कार्यक्षेत्र विशेष के आधार पर), किया गया ।

निम्न लिखित कार्यशाला सहभागी इस विचार गोष्ठी के सदस्य चुने गए ।

अध्यक्ष : डा मोहन मान सैंजू

बांगलादेश: डा. एम.एम. खान

पाकिस्तान: श्री हैदर खान
श्री सफा अली

अध्यक्ष - डा. मोहन मान सैंजू

भारत : श्री रमेश शर्मा
डा. बी.पी. मैथानी
सुश्री राधा भट्ट
श्री कुलभूषण उपमन्यू
श्री चण्डी प्रसाद भट्ट

नेपाल: श्री हरी प्रसाद न्यौपाने
श्रमिति माया देवी खनाल
श्री माधव पौडेल

यह सत्र श्री अनुपम भाटिया के स्वागत संबोधन से प्रारंभ हुआ । उन्होंनें स्वागत संबोधन के क्रम में श्री मोहनमान सैंजू, अध्यक्ष, एकीकृत विकास अध्ययन, काठमाण्डू का परिचय दिया । श्री भाटिया ने कहा कि उपर्युक्त संस्था नेपाल के सबसे पुराने और पूर्ण प्रतिष्ठित शोध और विकास के संस्थाओं में से एक है । यह क्रियाशील शोध और उनके उपयोगिताओं पर कार्यरत है ।

डा. सैंजू बहुत से महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय पदों पर कार्य कर चुके हैं, जैसे त्रिभुवन विश्वविद्यालय के शिक्षा अध्यक्ष, राष्ट्रीय योजना आयोग के सदस्य, और उपाध्यक्ष और अमेरिका और क्यानाडा में नेपाल के राजदूत । साथ ही उन्होंने विभिन्न प्रकार की नेपाल की संस्थाओं में नेतृत्व वाली भूमिकाएं निभायी हैं और "राष्ट्रीय प्राकृतिक स्रोत संरक्षण परिषद्" तथा 'एकीकृत ग्रामीण विकास उच्च स्तरीय समिति' भी उनके कार्य क्षेत्र रहे है । डा. सैंजू के बहुमुखी सेवा के लिए उन्हे नेपाल के विभिन्न राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है ।

सामुहिक विचार गोष्ठी के आरंभ होने से पहले डा. सैंजू ने विचार गोष्ठी में भाग लेने वाले सदस्यों का और उनके कार्यक्षेत्र का संक्षिप्त में परिचय दिया । उन्होंने कहा कि उन्हें आशा है की सहभागी अपने अनुभवों और विचारों से कार्यशाला को लाभान्वित करेंगे ।

बांगलादेश

डा. एम. एम. खान, प्राध्यापक, पब्लिक एडमिनिष्ट्रेशन विभाग, ढाका विश्वविद्यालय डा. खान "रूरल डेवलपमेन्ट इन बांगलादेश" के लेखक भी है । प्रजातंत्र और स्थानीय शासन से संबंधित इनके कुछ लेख भी प्रकाशित हो चुके है ।

डा. खान ने सत्र के आरंभ में ही सहभागियों को इस सत्र के मुख्य मुद्दे के विषय में याद दिलाया, उनके अनुसार मुख्य मुद्दा था 'स्थानीय शासन को सामुदायिक वन प्रक्रियाओं के साथ किस प्रकार समन्वित किया जाए' । उन्होंने दो समस्याओं को इंगित

किया पहली समस्या स्थानीय निर्वाचित एकाईयों से संबंधित थी, और दूसरी सामुदायिक वन व्यवस्थापन से संबंधित थी ।

डा. खान ने कहा ऐतिहासिक काल ब्रीटिश भारत में, ऐसा हमेशा देखा गया कि स्थानीय शासन केन्द्रीय शासन के मुलाजिम के रूप में कार्य करता था तथा केन्द्रीय शासन के लिए सहयोग जुटाया करता था । इस तरह इन स्थानीय शासन में क्षमता वर्धन के स्थान के बदले इन्हें निम्न लिखित समस्याओं का सामना करना पडता था ।

- स्वायत्तता की कमी
- अपर्याप्त पूंजी, अपने ही कोष के परिचालन की क्षमता में कमी
- सक्षम लोगों की कमी, केन्द्रीय सरकार सिविल कर्मचारियों की नियुक्ति करती थी लेकिन वे स्थानीय तौर पर सक्षम नहीं थे और
- निर्वाचित स्थानीय नेता हमेशा प्रभावकारी नहीं होते थे और साथ ही वे सच्चे अर्थ में स्थानीय जनता के प्रतिनिधि भी नहीं होते थे ।

सामुदायिक वानिकी के मुद्दे में वन विभाग अभी भी केन्द्र नियंत्रित ही था, जो वन कर्मचारियों और स्थानीय जनता के बीच अविश्वास का वातावरण तैयार करता था । वन विभाग में कर्मचारियों की नियुक्ति श्रेणी के आधार पर आधारित था । वन अधिकृतों को केवल यांत्रिक प्रशिक्षण दिया जाता था व्यावहारिक अनुभवों का उनमें खासा कमी थी । ज्यादातर वन कानून असमसामयिक थे, और उनका संशोधन भी नहीं किया गया था । वन नीति स्पष्ट और क्षेत्र सिमित नहीं थी ।

डा. खान ने निम्न लिखित सुझावों को प्रस्तुत किया

- शक्ति निक्षेपण और स्थानीय स्वायत्तता- यदि एक बार लोगों के अधिकार और जिम्मेवारियों दे दी जाए तो स्थानीय इकाईयाँ निश्चित रूप से विकसित होंगी ।
- समुदाय आधारित संस्थाओं को प्रोत्साहन
- ये संस्थाएं अचानक उभरी हैं, लेकिन इनमे अर्थ और नेतृत्व की कमी है, साथ ही इनके विकास में सहयोग की आवश्यकता है ।
- वन विभाग और स्थानीय निर्वाचित संस्थाओं के बीच संबंध में बढावा । राष्ट्रीय स्तर के राजनीति को इस तरह के कार्यकलाप के लिए नयी कार्य योजना की आवश्यकता होगी । सरकारी अधिकृतों को व्यवहारिक ज्ञान की आवश्यता ताकि वे स्थानीय स्तर के संस्थाओं के साथ काम कर सकें ।
- सरकारी कर्मचारियों की दादागीरी भी खत्म हो । दक्षिण एशिया के सभी देशों में यह एक ज्वलंत समस्या है ।

पाकिस्तान

श्री हैदर खान - सदस्य, उत्तरी क्षेत्र परिषद् ।

स्थानीय परिषद् में निर्वाचित होकर श्री खान स्थानीय सरकार के वन सलाहकार के रूप में नियुक्त हुए । इनका दर्जा क्षेत्रीय मंत्री का है । मुख्य रूप से ये वन क्रियाकलापों से संबंधित नीतियों के निर्माण में संलग्न हैं साथ ही एडबोकेसी, समुदाय परिचालन और आर्थिक मामलों की भी देख रेख करते हैं ।

पाकिस्तान में दों प्रकार के वन हैं सरकार संरक्षित वन, और नीजी वन । अकेले ही सरकार के लिए वन स्रोत व्यवस्थापन करना काफी कठिन था । सामुदायिक वनों में समुदाय ने संरक्षण, वृक्षारोपण और वृक्षों के काटने की जिम्मेवारी ली । ऐसा सोचा गया कि यदि समुदायों को ये जिम्मेवारियाँ दी जायगी तो वन संरक्षण को फायदा होगा । यदि वन नीति और समुदाय के फायदों में उल्झनें आएंगी तो वन ह्रास अवश्य होगा । इसलिए वन के प्रति समुदायों का लगाव बहुत ही महत्वपूर्ण है । राजनेता और गैर-सरकारी संस्थाएं सरकार और समुदायों के कार्यकलापों में समन्वय स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं । यदि गैर-सरकारी संस्थाएं समुदायों के साथ काम करती हैं, तो वे स्थानीय निर्वाचित इकाईयों और सरकार दोनों के बीच समन्वय कर सकती हैं । स्थानीय निर्वाचित संस्थाओं का सामुदायिक वानिकी में संलग्न होना जरूरी है ।

वन व्यवस्थापन के लिए सरकार के द्वारा स्थानीय जनता को उपलब्ध कराए गए प्रशिक्षण भी अपर्याप्त थे । हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र में समुदायों की समस्याओं और बाधाओं को सरकार को समझना चाहिए ।

श्री शफा अली - समुदाय संचालक, उत्तरी क्षेत्र, पाकिस्तान । अपने समूह सदस्यों के साथ, जो कि सफलता पूर्वक अपने वन क्षेत्रों का व्यवस्थापन करते हैं, श्री अली समुदाय संचालन करते हैं ।

पहले पाकिस्तान में श्री अली के क्षेत्र में वन क्षेत्र राज्य द्वारा नियंत्रित और संरक्षित थे। 1972 में केन्द्र सरकार ने नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया । लेकिन वन विकास के बदले वन नाश होने लगा । इसके बाद समुदाय सदस्यों ने ही सरकार की अनुमति से एक समूह बनाया जिसने वन व्यवस्थापन शुरू किया, और साथ ही वन स्रोतों के निर्यात और वन कटाव पर भी पाबंदी लगा दी गई । अब इस समय यह निश्चित किया गया है कि न तो सरकार वन कटाव करेगी और न ही समुदाय । समुदाय उपभोक्ता समूह के स्वीकारोक्ति के बिना वन विभाग, वन कटाव नहीं कर सकता है । समुदाय कोष के अभाव में वन संरक्षण पूर्ण रूप से नहीं कर पा रहा है । इसी बिन्दू पर यह आवश्यक है कि समुदाय, स्थानीय निर्वाचित इकाईयाँ, और सरकार, अपनी-अपनी भूमिकाओं को

निश्चित कर लें । ऐसे में कानूनी सलाह और गैर-सरकारी संस्थाएं, उपभोक्ता समूह, स्थानीय निर्वाचित संस्था और केन्द्र सरकार, को मदद के लिए हैं ।

भारत

श्री राकेश शर्मा- सहायक निर्देशक, उत्तर प्रदेश प्रशासन अकादमी, नैनीताल, उत्तर प्रदेश ।

उत्तर प्रदेश राज्य सरकार को एक सक्षम और संवेदनशील प्रशासन प्रदान करने के उद्देश्य से भु.पी.ए.ए. सिविल कर्मचारीयों के क्षमता वृद्धि में कार्यशील हैं ।

कार्यशाला का आधारभूत मुद्दा यह था कि सामुदायिक वानिकी पद्धति का निर्माण कैसे हो जो प्रशासनकि स्तर के साथ तृण मूल स्तर के लोगों का संपर्क स्थापित कर उन्हें फायदा पहुँचा सके । भारत के संदर्भ में कुमाऊँ में जिला वन व्यवस्थापन वन विभाग के हाथों में था और वन कर्मचारी वन के साथ समुदायों के संबंध को नहीं समझते थे । वन अधिकृतों ने गाँव के लोगों को वन व्यवस्थापन के तरीकों से अलग रखा । 1930 से कुमाऊँ और गढ्वाल में 'वन पंचायत' का आविर्भाव हुआ, जो आधारभूत रूप से सामुदायिक वन प्रणाली ही थी । यह प्रणाली काफी प्रभावकारी सिद्ध हुई । यह एक समुदाय आधारित वन व्यवस्थापन था, जिसमें समुदाय एक साथ मिलकर समिति का निर्माण करते, जो वन व्यवस्थापन करती थी । लेकिन इस प्रणाली को स्थानीय प्रशासन प्रणाली से संबंधित नहीं किया गया था । उस समय कुमाऊँ, और गढवाल के 15,000 गाँव में 4,500 वन पंचायते थीं । समुदायों के अन्तर्गत आने वाले वन क्षेत्र अच्छे स्थिति में थें लेकिन साथ ही सभी समूह वन व्यवस्थापन में उतने सक्षम नहीं थे ।

'विश्व बैंक परियोजना' लाई गयी थी जिसके माध्यम से यह सोच उभरा था कि वन पंचायत को स्थानीय प्रशासन इकाईयों के साथ संबंधित किया जाए । भारत में उस समय एक संबैधानिक संशोधन किया गया था जिसका लक्ष्य था कि पंचायत में शक्ति विकेन्द्रित किया जाए । भारत में सामुदायिक वन की नीति प्रत्येक राज्य में अलग-अलग थीं । एक ऐसे प्रणाली की आवश्यकता थी जिससे कि गाँव पंचायतों का वन समूहों के साथ सीधा संबंध हो और दोनों ही मिल कर विकास के लिए कार्य कर सकें, इसलिए उनके बीच समन्वय का होना आवश्यक था । दूसरा मुद्दा था कि किस प्रकार लोगों में सामुदायिक वन में काम करने के लिए क्षमता वृद्धि की जाए । स्थानीय लोगों को अपनी क्षमता वृद्धि करने के लिए जानकारी उपलब्ध कराना आवश्यक था । यह उपर्युक्त कार्यक्रम के स्थायित्व के लिए अत्यन्त ही आवश्यक था ।

पर्वतीय क्षेत्र में पुरूष नहीं बल्कि औरतें ईन्धन इकठ्ठा करती हैं क्योंकि इसे औरतों का काम समझा जाता है । यह प्रणाली पूर्ण रूप से लिङ्ग पक्षपात पर आधारित था । इसलिए समुदाय आधारित संस्थाओं और गैर-सरकारी संस्थाओं को समुदायों की क्षमता वृद्धि और लिङ्ग सजगता पर भी काम करना था ।

स्थानीय संस्थाएं और स्थानीय निर्वाचित संस्थाएं, समन्वित नहीं थे । इस दृष्टिकोण को बदलना था । इस तरह वक्ता ने ऐसा महसूस किया कि समन्वय, परिवर्तित दृष्टिकोण और क्षमता वृद्धि, ये तीन भविष्य के महत्त्वपूर्ण मुद्दे होंगे ।

डा. बी.पीं मैथानी, निर्देशक, ग्रामीण विकास राष्ट्रीय संस्था, गौहाटी, आसाम । डा. मैथानी "(लोक कार्य एवं ग्रामीण तकनीकि विकास परिषद्) काउन्सिल फार एडभान्समेन्ट आफ पिपल्स एक्शन एड रूरल टेक्नोलोजी" के सदस्य हैं । यह एक ऐसी संस्था है, जो स्वैच्छिक संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास को बढावा देती है, और इसका उद्देश्य है स्वैच्छिक संस्थाओं और स्थानीय शासन के बीच निकट संबंध कायम करना ।

भारत के पूर्वीय हिमाल क्षेत्र की विशेषता है कि यहाँ वन और क्षेत्र स्रोत, समुदाय के अधीन है । इस क्षेत्र में 200 से अधिक वन प्रजातियों रहती थीं और वे स्वयं ही अपने पारंपरिक तरीके से वन व्यवस्थापन और उपभोग करती थीं । इस तरह भारत के अन्य हिस्सों के वन व्यवस्थापन के प्रणाली से यहाँ का वन व्यवस्थापन प्रणाली भिन्न था । अभी 40 प्रतिशत वन क्षेत्र सरकार के नियंत्रण में है और 60 प्रतिशत वन क्षेत्र लोगों द्वारा प्रबंधित है । प्रत्येक गाँव की अपनी पारंपरिक संस्था थी जैसे कि, गाँव प्रमुख और गाँव परिषद् । ये संस्थाएं वन क्षेत्र व्यवस्थापन में संलग्न थी तथा इनके अपने नियम कानून थे । मौसमी खेती मुख्य पेशा था जो वन से जुड्ा हुआ था । सर कार के स्वामित्व में संरक्षित वन (रिजर्व फेरेस्ट) अरूणाचल प्रदेश में सम्पूर्ण वन क्षेत्रका 25 प्रतिशत मणीपूर में 3 प्रतिशत, मेघालय में 4 प्रतिशत मिजोरम में 56, प्रतिशत और नागालैण्ड में 12 प्रतिशत थे ।

गाँव परिषद् द्वारा वन व्यवस्थापन किया जाता था । वन प्रजाति प्रमुख वन संरक्षण के प्रति अधिक सजग नहीं थे क्योंकि वे वन के बाहर रहते नहीं थे और न ही उन्हें इसके महत्वका ही ज्ञान था । प्राकृतिक स्रोतों का ह्रास हो रहा था क्योंकि वन का नियंत्रण वन प्रजातियों के प्रमुखों के हाथ में था । उन क्षेत्रों के सीमाओं के भीतर उद्योग की स्थापना भी वन ह्रास का प्रमुख कारण था । जनता की अपील पर सर्वोच्च अदालत, भारत, ने वन आधारित उद्योगों को उन क्षेत्रों से हटाने का आदेश दिया था । सरकार ने स्थानीय पारंपरिक इकाईयों को वन व्यवस्थापन के लिए कानूनी विधान की व्यवस्था की । इन इकाईयों की अपनी न्याय व्यवस्था, प्रशासन और व्यवस्थापन प्रणाली थी । वक्ता ने अपने अनुभवों के आधार पर कहा कि, स्वैच्छिक संस्था भी इन व्यवस्थापन कार्यों में संलग्न होना चाहिए और उन्हें चाहिए कि वे समुदायों को यह विश्वास दिलाएं कि जो वन वे काट रहे हैं वही उनेक आय के स्रोत भी हो सकते हैं । स्थानीय प्रमुख ये सोचते थे कि वे ही वन के सर्वेसर्वा थे । इसलिए स्थानीय समुदायों में प्रजातांत्रिक भावनाओं का भी प्रचार प्रसार होना चाहिए ताकि वन व्यवस्थापन के कार्यो में जैसे कि, निर्णय-निर्माण और लाभांश विभाजन आदि में पारदर्शिता आ सके ।

राधा भट्ट, लक्ष्मी आश्रम, अल्मोडा, उत्तरप्रदेश ।
राधा भट्ट उत्तराखण्ड की गांधी वादी संस्था, लक्ष्मी आश्रम में 1951 से ही सदस्य के रूप में कार्यरत हैं । इनका प्राथमिक कार्य है, प्रत्येक प्रकार के प्राकृतिक स्रोतों जैसे कि पानी, मिट्टी और वन के व्यवस्थापन संरक्षण के लिए स्थानीय स्तर पर खास कर महिलाओं को एकत्रित करना । वे "चिपको आंदोलन" (हरे भरे पेड़ो को काटने से रोकने के लिए चालाया गया आंदोलन), से भी संलग्न रही हैं । वृक्षारोपण, खुले खदानों से मिट्टी की रक्षा और बडे-बडे बांध को हिमालय के उत्तराखण्ड में बनने से रोक्ने जैसे कार्य भी उनके क्षेत्र रहे हैं ।

राधा जी के अनुसार पर्वतीय क्षेत्रों में वन ह्रास का मुख्य कारण है, वन विभाग की मानसिकता । सरकारी अफसरों को यह गुमान है कि शिक्षित नहीं होने के कारण गाँव के लोग कुछ नहीं जानते हैं । इन अफसरों ने शुरू से ही ऐसा सोचा है कि इन ग्रामीण लोगों को पहले शिक्षित किया जाना चाहिए और राधाजी के अनुसार जब तक ऐसी सोच रहेगी, उन्हे नहीं लगता है कि स्वायत शासन तब तक लागू हो पाएगा । शक्ति निक्षेपण और विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को परिचालित करने के लिए ग्रामीण लोगों में विश्वास का होना आवश्यक है, इसलिए शक्ति निक्षेपण और विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया से पहले स्थानीय लोगों में विश्वास की भावना को विकसित करना आवश्यक है । स्थानीय लोगों की क्षमता और इच्छा के अनुसार ही कार्य होना चाहिए तभी बदलाव संभव है ।

जब स्थानीय समुदायों की बात ली जाए तो निर्णय प्रक्रिया में स्थानीय समुदाय अर्थात् सम्पूर्ण ग्रामीण जनता को शामिल किया जाए । बहुमत की नहीं बल्कि साधारण सहमति की बात होनी चाहिए । पंचायती राज प्रणाली में भी निर्णय निर्माण का अधिकार सरकार के ही हाथों में ही था । पंचायती राज ने लोगों को निर्णय करने के लिए बहुत से अवसर प्रदान किए लेकिन वे पूर्ण नहीं थे । कर विभाग, वन विभाग, और जिला प्रदेश के द्वारा बजेट नियंत्रित होता था, इसलिए राधा जी का मानना है कि जब तक इन मुद्दों को सुलझाया नहीं जाता तब तक स्वयं शासन की प्रणाली कारगर नहीं हो सकती है । अल्मोडा में वन पंचायत से प्राप्त कर करीब 10 करोड भारतीय रूपया था, लेकिन यह सरकार द्वारा नियंत्रित था । इस तरह का नियंत्रण स्वयं शासन को बढावा नहीं दे सकता और इस तरह वन तथा अन्य स्रोतों का संरक्षण भी नहीं हो सकता था । इसलिए स्वयं शासन के संदर्भ में कार्य पद्धति और योजना को स्थानीय लोगों के हाथ में देना पड़ा । इस पद्धति के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था, बजेट और योजना तर्जुमा आदि स्थानीय शासन के हाथों में देना पडा ।

जब तक राष्ट्रीय वन नीति स्वयं शासन के मुद्दे को नहीं उठाती तब तक कुछ नहीं किया जा सकता । अभी राष्ट्रीय वन नीति, वन नियंत्रण पर ही जोर देती है । पर्वतीय प्राकृतिक स्रोतों को समग्र रूप में लिया जाना चाहिए और जल, वन, मिट्टी आदि को

अलग-अलग इकाई में बांटना चाहिए । पर्वतीय इलाके विशेष, के लिए योजना और नीति आदि बनाते समय उपयुक्त बातों को ध्यान में रखना चाहिए । बदलाव के लिए यह शुरूआत गैरसरकारी संस्थाओं के सहयोग से ग्रामीण तृण-मूल स्तर से किया जाना चाहिए । यदि यह साकार होता है तभी नाटकिय बदलाव आ सकता है ।

श्री कुलभूषण उपमन्यू: 'नवरचना', हिमाचल प्रदेश ।
श्री उपमन्यू 'नवरचना' के प्रारंभिक सदस्य हैं । 'नवरचना' हिमाचल प्रदेश में समुदाय आधारित संस्थाओं और गैर-सरकारी संस्थाओं का नेटवर्क है । इसका मुख्य कार्य है, प्राकृतिक स्रोतों पर लोगों के नियंत्रण को कार्य रूप देना । श्री उपमन्यू 'हिमालय बचाओ आंदोलन' के भी सक्रिय सहभागी हैं । वन समुदाय समूह और सरकार के प्रत्येक स्तर के बीच संयुक्त कार्यक्रम लागू करने में श्री उपमन्यू प्रयत्नशील हैं । इनका मुख्य लक्ष्य यह है, पर्वतीय क्षेत्रों में स्वयंशासित समुदायों की अवधारणा पर आधृत स्थायी विकास की उपलब्धि ।

पर्वतीय क्षेत्रों में जल, वन, जमीन और पशु-पालन व्यवस्थापन के लिए एकीकृत समग्र योजना की आवश्यकता थी, क्योंकि लोग इन्हीं स्रोतों पर निर्भर करते थे । मुख्य मुद्दा यह था कि पर्वतीय क्षेत्रो में कौन इन स्रोतों का नियंत्रण करता था ।

जब तक ये स्रोत केन्द्र और उच्च स्तरीय लोगों द्वारा नियंत्रित होते रहेंगे, तब तक ये स्रोत संरक्षित नहीं हो सकते हैं क्योंकि ये उच्च स्तरीय लोग प्रत्यक्ष रूप से इन स्रोतों पर निर्भर नहीं करते हैं । इन स्रोतों के ह्रास से ये पूर्ण रूप से वाकिफ नहीं हैं, और न ही ये इनके नाश से दर्द का ही अनुभव कर सकते हैं । उदाहरण के तौर पर यदि पर्वतीय क्षेत्रों में खदान खनन और बांध निर्माण का असर स्थानीय लोगों को होता था तो इन कार्यो से उन लोगों को फायदा होता था, जो पर्वतीय क्षेत्रों से काफी दूर थे । यह विरोधाभास बराबर रूप से समुदाय स्तर और राष्ट्रीय स्तर योजना में देखा जा सकता था । यद्यपि सच्चे अर्थ में समुदाय और राष्ट्र के बीच कोई विरोधाभास नहीं है, क्योंकि समुदाय ही राष्ट्र हैं, और उच्च स्तरीय वर्ग जो योजना निर्माण करते थे वे सोचते थे कि समुदायों का फायदा उनके फायदे से विपरीत था । परिणाम स्वरूप वन विभाग और स्थानीय समुदायों के बीच मत भेद आरंभ हुआ इसी तरह बांधनिर्माण करने वालों और उनसे प्रभावित पर्वतीय लोगों में भी मतभेद शुरू हुआ । मुख्य मुद्दा यह था कि, किस तरह से इन मतभेदों को दूर कर समाधान का रास्ता ढूंढा जाए ।

विकास का वही ढाँचा जो समुदाय के समक्ष रखा गया समुदाय में कमी का कारण माना गया । क्योंकि लोगों मे ऐसा विश्वास था कि यदि वे इस विकास के ढाचे से सहमत हों तो इस विकास से होने वाले फायदे के वे हकदार होंगे, लेकिन यह उनका भ्रम था । पर्वतीय इलाकों में प्राकृतिक स्रोत के स्थायी विकास को अधिक महत्व नहीं दिया गया । विकास की बात चलने पर स्कूलों में अधिक कमरे का निर्माण, सड्कों के

चौडीकरण आदि जैसे मुद्दे उठते थे, जबकि जीवन से संबंधित जैसे कि गाँव में बेरोजगारी मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करना अधिक आवश्यक था ।

इसी संदर्भ में विकेन्द्रीकरण जैसे मुद्दों को उठाया गया । अभी विकेन्द्रीकरण का सही अर्थ है, शक्ति का विभाजन । जो निर्णय केन्द्र में नहीं लिए गए उन्हें राज्य और जिला स्तर के प्रशासन में भेज दिया गया, जबकि कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्दों के कारण स्थानीय समुदायों को सच्ची स्वायत्तता का दर्जा मिला । तभी विकेन्द्रीकरण पद्धति अपने सही अर्थो में लागू होगा जबकि समुदाय अपने जीवन से संबंधित मुद्दों का निर्णय लेगा । इस तरह के समुदाय व्यवस्थापन में समग्रता का दृष्टिकोण होना चाहिए । जैसे कि प्राकृतिक स्रोत के अन्तर्गत वन, भूमि, जल और पशुपालन सभी का व्यवस्थापन समुदाय आधारित हो, तभी सच्चे अर्थो में स्वयं शासन लागू होगा ।

भारत में तिहत्तरवें संवैधानिक संशोधन के बाद हिमाचल प्रदेश में सही अर्थ में विकेन्द्रीकरण फलित होगा, ऐसी आशा की गई, लेकिन केवल उपरी बदलाव ही आया । पंचायत, सरकार के एजेन्ट के रूप में काम करते थे । इस भूमिका में वे वनों और दूसरे प्राकृतिक स्रोतों का सही अर्थ में संरक्षण और व्यवस्थापन नहीं कर पाए क्योंकि उन्हें सरकार की इच्छा के अनुसार कार्य करना पड्ता था, न कि समुदायों की इच्छा और जरूरतों के अनुसार । पंचायत और दूसरी स्थानीय संस्थाओं को समुदायों के जरूरतों और समस्याओं को समझना चाहिए ।

भारत में गाँवो की कानूनी अवस्था नहीं है । 10 और 12 गाँवोंका पंचायत होताथा और वे सामान्य आवश्यकताओं को आपस नहीं बांटते थे । अद्यपि 'ग्रामसभा' को कुछ अधिकार दिए गए थे लेकिन सभी लोग बैठक में इकठ्ठा नहीं होते थे और इस तरह 10 या 20 लोग, 3,000 लोगों के लिए निर्णय ले लेते थे, यह ठीक नहीं था । यदि वे प्राकृतिक समुदायों का उपयुक्त प्रकार से व्यवस्थापन चाहते थे तो उनका कानूनी करण होना आवश्यक था । यह व्यवस्था हिमाचल प्रदेश और गढवाल में नहीं थी, वहाँ कर–ग्राम थे लेकिन सरकार को केवल कर से मतलब था नकि गाँव की समस्याओं से ।

इस बात पर जोर देना चाहिए कि समुदाय ही प्राकृतिक स्रोतों से संबंधित योजनाओं का निर्माण करे । वे लोग जिन्होंने योजनाओं को बनाया वे ग्रामीण लोगों की समस्याओं से वाकिफ नहीं थे, और लोग इन योजनाओं के निर्माण में शामिल नहीं हुए । गाँवों में एक रूपता लाने के लिए व्यवस्थापन की जिम्मेवारियों को समुदायों को देना चाहिए ।

आज पारंपरिक रोजगारों पर ही निर्भर नहीं रहा जा सकता है । इसलिए स्रोतों के आधार पर भी रोजगार के अवसर बनाए जाने चाहिए और इस के लिए योजनाएं हम स्वयं ही निर्माण करें पूरे भारत में गाँव विकास से संबंधित तकनीकि शोध नहीं किए गए हैं । श्री उपमन्यू के गाँव में पशुपालन एक मुख्य रोजगार है लेकिन पशुपालन में

आवश्यक पड्ने वाले सामानों जैसे कि हल आदि की व्यवस्था की ओर उचित ध्यान नहीं दिया गया है ।

हिमाचल प्रदेश में वन व्यवस्थापन में विभिन्न प्रकार की प्रणालियों को उपयोग में लाया गया, जिससे कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में शंका पैदा होने लगी । निर्वाचित इकाईयों के बीच समन्वय की आवश्यकता थी, लोगों को यह अधिकार दिया जाना चाहिए था कि वे निश्चित कर सके कि कौन सी संस्था स्रोत व्यवस्थापन में हिस्सा लेगी । साथ ही वन विभाग का भी दृष्टिकोण बदलना चाहिए ।

श्री चण्डी प्रसाद भट्ट - दशोली ग्राम स्वराज्य मण्डल, गोपेश्वर, उत्तर प्रदेश । 'दशोली ग्राम स्वराज्य मण्डल' एक गाँधीवादी सर्वोदय संस्था है । यह स्थानीय समुदायों को क्षमता प्रदान कर प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन के उपर उनके नियंत्रण को बढावा देता है, क्योंकि ये प्राकृतिक स्रोत उनके जीवन और पारंपरिक जीविका से जुड्े हुए हैं । यह संस्था 'चिपको आंदोलन' का जन्मदाता माना जाता है । इस 'चिपको आन्दोलन' ने वन-विभाग के उन नीतियों को चुनौति दी थी जिनके माध्यम से उत्तर प्रदेश का पर्वतीय जिला, उत्तराखण्ड के वनों का औद्योगिकरण होने वाला था ।

आजकल (चिपको आंदोलन के समय) केवल स्थानीय या राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं बल्कि विश्व स्तर पर प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन से संबंधित समस्याओं का मूल्यांकन किया जा रहा था । लेकिन व्यक्तिगत जरूरतों और सोच के अनुसार ये समस्याएं विभिन्न स्तर पर भिन्न-भिन्न प्रकार से मूल्यांकित हो रही थी, जिससे समस्याएं एक दूसरे से भिन्न थी । 'चिपको आंदोलन', इस मुद्दे पर कि कुछ पेडों को क्यों नहीं गिर ाया जाए, स्थानीय लोगों का 'वन विभाग' को एक प्रत्यक्ष चुनौति था । 'वन पंचायत' अधिकारियों से उल्झे हुए थे । लेकिन जो मुख्य रूप से इस आंदोलन में भाग ले रहे थे वे ऐसे लोग थे जिनकी जीविका प्राकृतिक स्रोतों से जुडी हुई थी ।

भारत की प्रथम वन नीति 1952 में और दूसरी 1988 में बनायी गई । यद्यपि दस साल बीत गए हैं फिर भी ये नीतियाँ अभी तक लागू नहीं हो पायी हैं । भारत के कुछ ही हिस्सों में संयुक्त वन व्यवस्थापन कार्यक्रम लागू हुआ था । श्री चण्डीप्रसाद जी ने कहा कि वे इस वात अडे थे कि यह एक लोक कार्यक्रम है और सरकार की इसमें भूमिका एक सहयोगी के रूप में होनी चाहिए । संयुक्त वन व्यवस्थापन कार्यक्रम अभी भी धुमिल था, और वे इस कार्यक्रम से संतुष्ट नहीं थे । वक्ता का यह मानना था कि निर्णय-निर्माण का अधिकार उन लोगों को दिया जाना चाहिए जो प्रत्यक्ष रूप से वन से जुडे हुए हैं । निर्णय निर्माण की प्रक्रिया में महिलाओं का बहुमत होना चाहिए क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाएं प्राकृतिक स्रोतों से प्रत्यक्ष रूप से जुडी हुई हैं ।

श्री भट्टजी ने यह प्रस्ताव रखा कि वन पंचायत को ग्राम पंचायत के अन्तर्गत काम करना चाहिए । प्रत्येक हिमाली गाँव में एक 'गाँव वन' हो जो वन पंचायत द्वारा प्रबंधित हो । प्रत्येक 'गाँव वन' में नौ प्रमुख थे । वक्ता ने यह सुझाव दिया कि नौ में से पांच महिलाएं होनी चाहिए ताकि वे निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके ।

नेपाल

श्री हरी प्रसाद न्यौपाने - अध्यक्ष, सामुदायिक वन उपभोक्ता समूह संघ, नेपाल, (फेकोफन)

सामुदायिक वन उपभोक्ता समूह संघ, नेपाल की मुख्य घोषणा है, सामुदायिक उपभोक्ता समूह के हरेक क्रियाकलाप अर्थात प्रारंभिक विकास से लेकर वन अधिकरण तक को सहयोग देना । सामुदायिक वन उपभोक्ता समूह संघ, नेपाल, मुख्य रूप से नीति-निर्माण प्रस्ताव, नेटवर्क बनाना, सूचनाओं का आदान-प्रदान और प्रशिक्षण के क्षेत्र में कार्यरत है । 'फेकोफन' सामुदायिक वन व्यवस्थापन को नेपाल में बढावा देने के उद्देश्य से सरकार के हरेक स्तर जैसे गाँव विकास समिति, जिला विकास समिति और वन तथा भू-संरक्षण मंत्रालय के साथ भी काम करता है ।

श्री न्यौपाने ने कहा कि वे लोग सामुदायिक वन व्यवस्थापन को इस स्थिति तक पहुँचाने में बहु त से सीढियों को पार कर चुके हैं । सामुदायिक वन जो हस्तांतरित किए जा चुके थे, वे कुछ क्षेत्रों में अच्छी स्थिति में थे । लेकिन दूसरी तरफ उपभोक्ता समूह हमेशा अच्छी तरह से वन व्यवस्थापन और समन्वय नहीं कर पाते थे । सामुदायिक वन, कानूनों, नियमों और विधानों के दोहरेपन का सामना कर रहा था । समुदायों का पूर्ण रूप से सहभागी नहीं होना भी बाधा था, मुख्य रूप से लिङ्ग समानता का अभाव, क्योंकि यह प्रत्यक्ष रूप से परंपरा और संस्कृति से जुडा हुआ था ।

दूसरी समस्या थी, लोगों की आर्थिक स्थिति, जिसके कारण वे विकास के कार्यक्रमों में समय नहीं दे पाते थे । उपभोक्ता समूह को यह चाहिए कि वे बैठकों और सभाओं के माध्यम से लोगों में चेतना और इच्छा जगाए । बाहरी ऐजेंसियों के साथ समन्वय का भी अभाव था । स्थानीय निर्वाचित संस्थाओं के साथ पूर्ण रूप से संबंध और समन्वय बढाया जाने की आवश्यकता थी । इन संस्थाओं के साथ निरंतर संबंध कायम हो, यह आवश्यक था ।

सामुदायिक वन कानूनों और नगरपालिका जिला और गाँव विकास समितियों के अधिकार और कर्तव्य को निर्धारित करने वाले कानूनों के बीच उल्झन बरकरार थी । इन उल्झनों को दूर किया जाना चाहिए और वन कानूनों को स्थापित किया जाना चाहिए, जिनके माध्यम से उपभोक्ता समूह को स्वामित्व, वन परिचालन, और वन क्षेत्रों में अधिकार सौंपे गए थे । दूसरे उल्झन थे उपभोक्ता समूहका अपने अधिकार और

कर्तव्य के विषय में जानकार नहीं होना । अधिकार, नियंत्रण एवं समन्वय से संबंधी उल्झनों का सुलझना आवश्यक था ।

वन से संबंधित मामलों में गाँव विकास समिति और जिला विकास समिति में समन्वय आवश्यक था ।

उपभोक्ता समूह, स्थानीय निर्वाचित संस्थाएं और सरकार की एजेन्सियों के बीच अधिकार को लेकर विरोध उत्पन होता था । इस कार्यशाला के माध्यम से ऐसे रास्ते खुलने चाहिए जो कि उपभोक्ता समूह, गाँव विकास समिति, जिला विकास समिति और सरकारी एजेन्सियों और संघ के बीच समन्वय और परस्पर निर्भरता को दिखा सके । जिससे कि किसान और साधारण जनता सामुदायिक वन के विकास के लाभ से वंचित न रहें ।

सच्चाई यह है कि, कानून और उससे संबंधित नियम-विनियम मन्त्रालय द्वारा थोपे गए हैं, इनमें तारतम्यता की कमी है । श्री न्यौपाने ने आशा व्यक्त की यह कार्यशाला गोष्ठी उन मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करेगा जो अन्य वक्ताओं द्वारा उठाए गए हैं, और साथ ही वन-स्रोतों से प्राप्त होने वाले फायदों के समान विभाजन तथा स्थानीय निर्वाचित संस्थाओं और वन उपभोक्ता समूह के बीच सामंजस्य जैसे मुद्दोंको प्रकाशित करेगा ।

माया देवी खनाल - अध्यक्ष, हिमाली तृण-मूल महिला प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन नेटवर्क (हिमवन्ती) ।
सम्पूर्ण हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र में 'हिमवन्ती' प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन से जुडी हुई हैं, तथा तृण-मूल महिलाओं को शक्ति सम्पन्न करने में सहयोग देती है । वर्तमान में इस संस्था का कार्य है महिलाओं का समूह बनाकर उन्हें प्रशिक्षित करना तथा इस हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र के अन्य महिलाओं के साथ उनका संबंध स्थापित करना ।

विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में महिलाओं की भागेदारी महत्वपूर्ण है । 'हिमवन्ती' के माध्यम से महिलाओं को उत्साहित करके, जीविका के लिए उठाए गए संघर्षो में उनकी भागेदारिता हो, ऐसा वातावरण तैयार करना ताकि वे स्वावलंबी भी हो सकें ।

गाँवो में अब भी महिलाएं सर ढककर ही दूसरे पुरूषों और अग्रजों का सामना करती हैं । पुरूषों के साथ खुल कर बात चीत नहीं कर पाती हैं । जब महिलाओं ने विकास के कार्यो में भाग लेना शुरू किया, या यूँ कहिए कि घर से बाहर आने लगीं तो लोगों ने उन्हे गलत समझना शुरू किया । गाँवो में लोग अभी भी विश्वास करते हैं, कि औरते फैसले स्वयं नहीं कर सकती हैं ।

उन्हें कार्यशाला में आमंत्रित करने और आगे बढ़ने के लिए उत्साह देने के लिए 'हिमवन्ती की ओर से माया जी ने 'इसीमोड' को धन्यबाद दिया । दूसरे सहभागियों से विचार विमर्श करना सहयोग पूर्ण था । यह गोष्ठी महिलाओं को और अधिक शक्ति सम्पन्न बनाएगा, और विकेन्द्री-करण की कोशिशों में महिलाओं की सहभागिता को और अधिक बढाने में मदद करेगा, ऐसी आशा है । महिलाएं साथ मिल कर बहुत कुछ कर सकती हैं और एक दूसरे को सहारा और उत्साह भी दे सकती हैं । इस वातावरण में कुछ भी असंभव नहीं है ।

'चिपको आंदोलन' को शुरू करने वाली गौरा देवी ने उन्हें प्रेरणा दिया । महिलाओं को कुछ अधिकार मिलना ही चाहिए । वे कानून और उनके व्यवहार के प्रति सचेत हों । यद्यपि महिलाओं को घर - गृहस्थी देखनी पड़ती है फिर भी उन्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए और अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए लगे रहना चाहिए । धीरे - धीरे पुरूष भी अपने दृष्टिकोण को बदलेंगे और उनके सहारे उन्हें काफी सहयोग मिलेगा । श्री माया जी ने आशा व्यक्त की, कि कार्यशाला के अन्त में सहभागी ऐसे निर्णयों और सुझावों पर पहुँचेंगे जो आगे मार्ग प्रशस्त करेगा ।

अध्यक्ष के उद्‌गार

डा. सैंजू ने कहा कि इस विचार गोष्ठी के सदस्यों के अनुभवों से उन्होंने बहुत कुछ सीखा है ।

डा. सैंजू ने कहा कि, कोई भी समस्या सुलझे बिना नहीं रह सकती है, इसलिए आवश्यक है कि उन सुझावों पर पहुँचा जाए जो आधारभूत लक्ष्य की प्राप्ति की ओर हों । उन्होंने खास कर हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र के वन व्यवस्थापन में निर्वाचित संस्थाओं की भूमिका से संबंधित मुख्य मुद्दे को तथा स्थानीय स्तर के सरकार की समस्याओं को चिन्हित् किया ।

प्रत्येक देश के मुद्दे प्रजातांत्रिकरण, शासन और विकेन्द्रीकरण, से संबंधित थे । साथ ही निर्वाचित अधिकारियों के जिम्मेवारियों से संबंधित मुद्दे भी विचारणीय थे । प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन में निर्वाचित स्थानीय इकाईयों की एक अपनी निश्चित भूमिका है । हमे यह देखना है, कि, विकास के विभिन्न पक्षों से वे किस तरह जुडे हैं और हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र में ये इकाईयाँ किस प्रकार से इन व्यवस्थापनों को देख रही हैं ।

बढ़ती हुई संलग्नता और विरोधों को महसूस किया जाता रहा था जैसे कि वन उपभोक्ता समूह और निर्वाचित इकाईयों के बीच विरोध, गाँव विकास समिति और व्यक्ति विशेष के बीच विरोध, क्योंकि नये-नये विकास के कदम और आशाएं बढ़ रही थी । जैसे-जैसे भूमिकाओं में बदलाव और आशाएं उभरती गई वैसे-वैसे नये-नये विरोध

भी पैदा हुए, इनको सुल्झाना आवश्यक था । नये कानून और नियम बने लेकिन वे उसी रूपमें लागू नहीं हो पाए जिस रूप में आशा की गई थी । सकारात्मक नीतियों के होते हुए भी समस्याएं और विरोध बरकरार ही थे, उनको पहचानना आवश्यक था । मुख्य मुद्दा यह था कि किस तरह से लोगों के जीवन स्तर को उठाया जाए । डा. सैंजू ने इस विचार गोष्ठी में उठाये गए मुख्य मुद्दों को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया ।

१. यह आवश्यक है कि हमारे जीवन पद्धति और प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन में तारतम्यता लाई जाए । क्योंकि यह हमारे जीवन का अंग है । हम प्राकृतिक स्रोतों का सम्मान करते हैं, और उन्हे नाश होनें से बचने के लिए हम आवश्यक कदम उठाएं । प्राकृतिक स्रोतों का ह्रास इतिहास में नहीं हुआ करता था, यह चलन आज की बात है इसलिए इसे सुधारा जा सकता है । दृष्टिकोण और व्यवहार भी बदल सकते हैं । सभी समस्याएं सुल्झने योग्य है, यदि इन्हें एक के वाद एक सुल्झाया जाए । हमें अपनी पारंपरिक मूल्यों को पहचानना है ।
२. हमने यह जाना कि सामुदायिक वन व्यवस्थापन केवल सामुदायिक वन समूहों द्वारा नहीं हो सकता था, निर्वाचित संस्थाओं के साथ समन्वय और संबंध आवश्यक थे, और भविष्य के कार्ययोजना में यह एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा होगा ।
३. वन कर्त्ताओं के ही दृष्टिकोण में ही परिवर्तन नहीं होना था बल्कि नीति निर्माण कर्त्ता और राजनीतिओं के सोच में भी परिर्वतन आवश्यक था ।
४. राष्ट्रीय और स्थानीय राजनीतिक कार्यकलाप में महिलाओं की सहभागिता महत्त्वपूर्ण थी । सामुदायिक वन उपभोक्ता समूह में निर्णय निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं का और अधिक प्रतिनिधित्व आवश्यक था ।
५. विकेन्द्रीकरण का अर्थ होना चाहिए लोगों और स्थानीय निर्वाचित संस्थाओं में शक्ति निक्षेपण, स्वायत्तता का क्या अर्थ था इस संदर्भ में ? इसे किस प्रकार परिभाषित करना था ? निर्णय-निर्माण अधिकार और स्वायत्तता समानान्तर होने चाहिए थे । इमान्दार सहभागिता की आवश्यकता थी न कि दुरूपयोग की ।
६. वन संरक्षण में संलग्न स्थानीय सरकारी संस्थाएं और निर्वाचित इकाइयों के बीच संबंध को विकसित करना, और अधिक सहयोग संचार प्रणालीकी आवश्यकता थी ।
७. क्षमता वर्धन के साथ-साथ लोगों के अपने ज्ञान और अनुभव में विश्वास की भावना की आवश्यकता थी । नयी-नयी चुनौतियों का सामना करने के लिए स्थानीय स्तर पर शुरू किए गए नये-नये तकनीकियों में नये प्रशिक्षण की आवश्यकता थी । जिससे व्यवस्थापन प्रणाली में प्रशिक्षण की आवश्यकता को महसूस किया गया । महिलाओं की सहभागिता को बढाना था, इसलिए चेतना में बढावा और शिक्षा की जरूरत हुई ।
८. पर्वतीय क्षेत्रों में सामान्य संम्पत्ति व्यवस्थापन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण को उत्पन्न करना था ।

९. नियम, कानून और विधानों में दोहरोपन और अस्पष्टता थी । विभिन्न स्तरों पर उल्झने भी थीं । कुछ समस्याओंको रोका भी जा सकता था, यदि उन्हें पहले ही पहचाना जाता ।

डा. सैंजू ने कहा कि हमें ऐसे कार्य पद्धतियों की शुरूआत करनी चाहिए जो हिन्दू कुश-हिमालय क्षेत्र में महिलाओं और पुरूषेा को निर्णय निर्माण के सभी पक्षेां में, जो कि उनके जीवन को प्रभावित करते हैं, सहभागी होने के लिए क्षमता प्रदान करे । यह सभी इकाईयों का समग्र लक्ष्य होना चाहिए । उन्होंने अयोजनाकर्त्ताओंको उन्हें इस सत्र का अध्यक्ष बनाने के लिए और इस महत्त्वपूर्ण रोचक विचार-गोष्ठीको सुनने का मौका देने के लिए धन्यवाद किया । उन्होंने कहा कि यह अपने तरह का मंच है, जिसका मुख्य लक्ष्य है, शासन और प्राकृतिक स्रोत व्यवस्थापन के बीच अर्न्तक्रिया को बढावा देना ।

पुष्पों के माध्यम से 'इसीमोड' के प्रतीक चिन्ह की प्रस्तुति ।

इसीमोड के प्रायोगिक क्षेत्र, गोदावरी (ललितपुर, नेपाल) में नेपाल के एक सहभागी द्वारा वृक्षारोपण